गीता नाम से उपलब्ध स्वतन्त्रग्रन्थ

आशीष सेमवाल, तृप्ति जुयाल
माया ग्रुप ऑफ कॉलेजेस, देहरादून, इंडिया

सार -

सामान्यतः 'गीता' नाम से महाभारत के भीष्मपर्व के अन्तर्गत उपलब्ध कृष्ण–अर्जुन संवाद के रूप में 700 श्लोकों वाली '**श्रीमद्भगवतगीता**' ही प्रचलित है लेकिन शान्तिपर्व के अन्तर्गत मोक्ष पर्व के प्रकरणों के रूप में पिंगल–गीता, उतथ्य–गीता, वामदेव–गीता, ऋष–गीता, षड्ज–गीता, शपाक–गीता, मंकि–गीता, बोध्य–गीता, विचरव्यु–गीता, हरीत–गीता, वृत्र–गीता, पाराषर–गीता और हंस–गीता मिलती है। अष्वमेध पर्व में अनु–गीता के एक भाग विषेष का नाम '**ब्राह्मणगीता**' है। इनकी कोटक मन्त्री समर्थ रामदास स्वामी ने दासबोधक पहले दषक के पहले समास में दी है–

षिव–गीता, राम–गीता, गुरू–गीता, गर्भ–गीता।
उत्तर–गीता, अवधूत–गीता। वेद आणि वेदान्त।।
भगवद्–गीता, ब्रह्म–गीता। हंस–गीता, पाण्डव–गीता।
गणेष–गीता, यम–गीता। उपनिषदे भागवत।।

पुराणों में भी अनेक गीताओं की सत्ता मिलती है। जैसे गणेषपुराण के अन्तिम क्रीड़ाखण्ड के 138 से 148 अध्यायों में '**गणेष–गीता**' कही गयी है। कर्मपुराण के उत्तर भाग के पहले ग्यारह अध्यायों में '**ईष्वर–गीता**' है। इसके बाद व्यासगीता का आरम्भ हुआ है। स्कन्दपुराण के अन्तर्गत सूतसंहिता के चौथे अर्थात् यज्ञवैभवखण्ड के उपरिभाग के आरम्भ के 12 अध्यायों तक '**ब्रह्म–गीता**' है और उसके बाद 8 अध्यायों में '**सूत–गीता**' है। एक अन्य ब्रह्मगीता भी है, जो योगवषिष्ठ के निर्वाण प्रकरण के उत्तरार्द्ध (सर्ग 173 से 181) में आ गयी है। '**यम–गीता**' तीन प्रकार की है। पहली विष्णुपुराण के तीसरे अंष के 7वें अध्याय में, दूसरी अग्निपुराण के तीसरे खण्ड के 381वें अध्याय में और तीसरी, नृसिंहपुराण के 8वें अध्याय में है। इसी प्रकार एक '**राम–गीता**' जो महाराष्ट्र में प्रचलित है, वह अध्यात्म रामायण के उत्तरकाण्ड के 5वें सर्ग में है और यह अध्यात्म रामायण ब्रह्माण्ड पुराण का एक भाग माना जाता है। एक अन्य रामगीता '**गुरूज्ञानवाशिष्ठ–तत्वसारायण**' नामक ग्रन्थ में है, जो मद्रास की ओर अधिक प्रचलित है। इसमें ज्ञान, उपासना और कर्म सम्बन्धी तीन काण्ड हैं। इसके उपासक–काण्ड के द्वितीय पाद के पहले 18 अध्यायों में रामगीता है और कर्मकाण्ड के तृतीय पाद के पहले पॉच अध्यायों में **सूर्य–गीता** है। नारदपुराण में अन्य पुराणों के साथ–साथ पद्मपुराण की विषय अनुक्रमणिका में '**षिव–गीता**' का उल्लेख मिलता है। पातालखण्ड में श्रीमद्भगवतपुराण के ग्यारहवें स्कन्ध के 13 वें अध्याय में '**हंस–गीता**' 23 वें अध्याय में '**भिक्षु–गीता**' कही गयी है। तीसरे स्कन्ध के कपिलोपाख्यान 23–33 को '**कपिल–गीता**' कहा गया है। '**कपिल–गीता**' नामक एक स्वतन्त्र पुस्तक भी है जिसमें हठयोग का प्रधानता से वर्णन किया गया है। भागवत्पुराण के ही समान देवीभागवत् में भी, 7वें स्कन्ध के 31 से 40 अध्याय तक, एक गीता है जिसे देवी के कही जाने के कारण '**देवी–गीता**' कहा जाता है। **भगवद्–गीता** का ही सार अग्निपुराण के तीसरे खण्ड के 380 वें अध्याय में, तथा गरूड़पुराण के पूर्वखण्ड के 24 वें अध्याय दिया गया है। योगवषिष्ठ के निर्वाण प्रकरण में 'अर्नुनोपाख्यान' भी शामिल है, जिसमें **भगवद्–गीता**का सारांष दिया गया है। इसमें **भगवद्–गीता**के अनेक श्लोक अक्षरषः पाये जाते हैं। वराहपुराण, षिवपुराण और वायुपुराण में गीता माहात्म्य का होना बताया गया है।

<u>गीता नाम से उपलब्ध स्वतन्त्रग्रन्थ</u>–

दत्तात्रेय विरचित **अवधूत–गीता**, महर्षि याज्ञवल्क्य कृत **'याज्ञवल्क्य–गीता'** आदि अनेक स्वतन्त्र ग्रन्थ गीता नाम से प्रचलित मिलते हैं। **'पंचदष–गीता'** नाम से गीताओं का एक पृथक संग्रह लक्ष्मीवेंकटेष्वर प्रेस से सं0 1982 में प्रकाषित हुआ है जिसमें **कष्यप–गीता,शौनक–गीता**, तीन अध्यायों में **अष्टावक्र–गीता**, 2 अध्यायों में **नहुष–गीता, सरस्वती–गीता**, 4 अध्यायों में **युधिष्ठिर–गीता, बल–गीता, धर्मव्याध–गीता** एवं **श्रीकृष्ण–गीता** का संग्रह है। कई गीतकारों ने अध्यात्म और आत्मज्ञान सम्बन्धी सिद्धान्तों की सार रूप में संक्षेपतः वर्णन करने की चेष्टा की है।

विभिन्न रचयित गीताओं का संक्षिप्त परिचय–

1. ब्राह्मण गीता–

यद्यपि 211 श्लोकों से संगठित यह गीता अन्य गीताओं से कुछ छोटी ही है, पर इयमें अध्यात्म का विवेचन बड़ी बोधगम्य शैली में किया गया है। श्रीकृष्ण अर्जुन को ब्राह्मण–ब्राह्मणी के संवाद के रूप में मोक्ष–मार्ग निर्दिष्ट करते हैं। लेखक ने आरम्भ में ही कहा है कि सामग्री, समिधा, धृत, सोम आदि से यज्ञ, हवन करना भी कर्म ही है, पर इस कर्म को राक्षस नष्ट करते हैं। इसलिए सर्वोत्तम धर्म–कर्तव्य आत्मा का ध्यान करना ही है। इस यज्ञ कर्म में पॉचों इन्द्रियॉ तथा मन और बुद्धि को ही अग्नि की सात जिह्वायें मानकर यज्ञ कर्म की कल्पना की गयी है। ब्राह्मण–गीता में अध्यात्म विषयक समस्या को अनेक प्रकार से बहुत सूक्ष्म रूप से सुलझाया गया है और कहा है कि 'मैं तो योग रूपी यज्ञ का ही अनुष्ठान करता हूँ जिसमें ज्ञानाग्नि को प्रज्वलित किया जाता है। जैसे जल नीचे की ओर बहता है वैसे ही ज्ञानी व्यक्ति नारायण की प्रेरणा से कार्य करता है। यही मोक्ष का सच्चा मार्ग है।'[1]

2. पाराषर–गीता–

युधिष्ठिर के आग्रह करने पर भीष्म उसे कल्याण प्राप्ति का मार्ग बताते हैं। जनक एवं महर्षि पाराषर संवाद के प्रसंग रूप में भीष्म धार्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए व्यावहारिक नियमों का उल्लेख करते हैं, जिससे मनुष्य को इहलोक और परलोक में परम कल्याण प्राप्त हो। इसे 291 श्लोक हैं। लेखक के कथनानुसार मनुष्य की उन्नति–अवनति तथा सुख–दुःख की प्राप्ति का मुख्य हेतु उसके जन्म जन्मान्तर के कर्म ही हैं, सांसारिक धर्मों का पालन करते हुए क्रमषः पाप–पुण्य, कर्मों की आसक्ति का त्याग कर परब्रह्म में लीन होने का प्रयत्न करें क्योंकि यही भवसागर से पार होने का सच्चा मार्ग है।

3. भीष्म–गीता–

युधिष्ठिर के भीष्म से पाप का अधिष्ठान पूछने पर 518 श्लोकों से रचित इस भीष्म–गीता के आरम्भ में भीष्म जी ने पाप का अधिष्ठान लोभ को ही बताया है–'लोभ उस ग्राह के समान है जो मनुष्य को निगलने के लिए सदा तैयार रहता है।' लोभ से ही मनुष्य पापाचारी होता है। आगे भीष्म जी ने अज्ञान के कुपरिणाम संयम, तप, सत्य आदि का महत्व, क्रोध का त्याग, दुष्टजनों का त्याग आदि गुणों पर प्रकाष डाला है। राजा के धर्मों का भी वर्णन है। इस दृष्टि से यह नीति का भण्डार ही है।[2]

4. युधिष्ठिर–गीता–

इसमें 273 श्लोक हैं। इसमें दान देने के सम्बन्ध में सामान्य नियम बताए गये हैं जिन्हें प्राचीनकाल में उचित माना जाता था। मुनि वैषम्पायन मार्कण्डेय और राजा युधिष्ठिर के आख्यान के रूप में इसे कहते हैं। दान का सर्वोत्तम पात्र सत्यपात्र और ज्ञानी ब्राह्मण को माना गया है। गायत्री जप का विषेष महत्व भी इस गीता में बताया गया है कि दोनों समय भगवती गायत्री का जप करने वाला उनकी कृपा से पवित्र और पापरहित हो जाता है। अन्त में कुवलाष्व की कथा दी गयी है, जो मार्कण्डेय पुराण में विस्तृत रूप से वर्णित है।

5. मनु–गीता–

इसमें 151 श्लोक हैं। युधिष्ठिर द्वारा ज्ञानयोग का, वेदों का और वेद में कहे हुए नियमों का फल पूछने पर, परमात्मा के ज्ञान मार्ग पूछने पर भीष्म जी इस विषय में प्रजापति मनु और महर्षि बृहस्पति संवाद

रूप इतिहास को दृष्टान्त रूप में कहते हैं। मनु–गीता के लेखक ने सृष्टि की उत्पत्ति सांख्य सिद्धान्त के अनुसार मानी है। उनके मत में सभी प्राणी प्रकृति से उत्पन्न होते हैं और उसी में लीन हो जाते हैं। पुरूष, प्रकृति, पॉचों विषय, दस इन्द्रियॉ, अहंकार, मन और पंचभूत इन 25 तत्वों के समूह को ही **'प्राणी'** कहा गया है। पुरूष की आत्मा अव्यक्त है और उसके कर्म व्यक्त हैं इसलिए मरणकाल में वह अव्यक्त तत्व को प्राप्त हो जाता है परन्तु कामनाओं के कारण वह पुनः संसार में लौट आता है।

6. <u>जापक–गीता</u>–

इसमें 161 श्लोक हैं। युधिष्ठिर के भीष्म से काल, मृत्यु, यम, इक्ष्वाकु और जापक ब्राह्मण के विवाद का प्रसंग पूछने पर पितामह इस प्रसंग के वृतान्त को कहते हैं। इसमें जप की श्रेष्ठता दिखाने के लिए एक ऐसे साधक का उपाख्यान कहा गया है जिसमें केवल जप को ही अपने जीवन का एकमात्र उद्देष्य बना लिया था। जप के साथ–साथ जापक ने सत्य के महत्व की इस प्रकार चिरस्थाई स्थापना की है– 'अब तक लोगों ने जितने तप किए हैं और आगे भी जितने करेंगे उन सब को सौ गुणा अथवा लक्ष गुणा करें, तो भी सत्य से बढ़कर उनका महत्व नहीं हो सकता।[3]

7. <u>हंस–गीता</u>–

केवल 47 श्लोकों से बनी यह बहुत छोटी रचना है पर इसमें साररूप में मानवीय सद्गुणों का जो वर्णन किया है, वह निष्चय ही अनुसरणीय है। युद्धिष्ठिर के भीष्म पितामह से इस प्रकार पूछने पर कि, 'संसार में अनेक विद्वानों द्वारा सत्य, इन्द्रिय संयम, क्षमा और श्रेष्ठ बुद्धि की प्रषंसा की जाती है।' इस विषय में उनका क्या मत है, भीष्म प्राचीन काल में हुए साध्यगणों के हंस से हुए संवाद को कहते हैं। इसमें क्रोध के त्याग और क्षमाषीलता की श्रेष्ठता की सराहना की गयी है। आगे सत्य की प्रषंसा करते हुए कहा गया है कि, 'जिस प्रकार जहाज के द्वारा समुद्र पार किया जाता है, उसी प्रकार सत्य स्वर्गलोक तक पहुॅचने की सीढ़ी है।' व्यर्थ भाषण की अपेक्षा मौन रहना, प्रिय बोलना और धर्मसम्मत कहना वाणी की विषेषतायें हैं। ऐसे ही विभिन्न कल्याणकारी उपदेषों से यह गीता भरी है।[4]

8. <u>कौषिक–गीता</u>–

इसमें मार्कण्डेय जी द्वारा युद्धिष्ठिर के अपनी तपस्या की शक्ति से एक बगुली को जला देने वाले कौषिक ब्राह्मण, एक पतिव्रता स्त्री और धर्म व्याध की कथा को 426 श्लोकों में बहुत सुन्दर ढंग से कहा गया है। स्त्री क्रोध को मनुष्य का महान शत्रु बताते हुए कौषिक को क्रोध न करने का उपदेष देती है और ब्राह्मण की परिभाषा बताती है– 'जो सदा सत्य बोले, गुरू को सन्तुष्ट रखे, हिंसित किया जाने पर भी दूसरे की हिंसा करने को उद्यत न हो, जो धर्म परायण और स्वाध्याय में तत्पर रहता हो........आदि, उसे देवगण ब्राह्मण कहते हैं।' इस प्रकार यह गीता उपाख्यान के रूप में होने पर भी उच्चकोटि के आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक तथ्यों से युक्त है और विषेष रूप से लाभप्रद है।

9. <u>विदुर–गीता</u>–

विदुर जी महाभारत काल के बड़े सदाचारी, नीतिज्ञ और न्यायप्रिय व्यक्ति थे। यद्यपि वे कौरवों के आश्रित थे, पर उनके अनीतिपूर्ण कार्यों को देखकर वे सदैव पाण्डवों के शुभचिन्तक बने रहे। जब महाभारत संग्राम में समस्त कौरव–पक्ष का नाष हो गया और इस कारण महाराज धृतराष्ट्र शोक सागर में निमग्न हो रहे थे तो विदुर जी ने उनको भी समयानुकूल धर्म का उपदेष दिया। उन्हें प्राणियों के जीवन–मृत्यु के विषय में जो कुछ कहा, वह अधिकांष भगवत्गीता से मिलता–जुलता ही है। उन्होंने कहा–

'सभी संयोगों का अन्त वियोग में है और सभी के जीवन का अन्त निष्चय ही मृत्यु के रूप में होता है.... जब काल आता है तब उसका उल्लंघन करने में कोई समर्थ नहीं होता'–

अभावादीनि भूतानि भाव मध्यानि भारत।
अभाव निधनान्येव तत्र का परिदेवना।। (ष्लोक–6)

यह सिद्धान्त भगवद्गीता में भी ज्यों का त्यों पाया जाता है–

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्त निधानान्येव तत्र का परिदेवना।। (2.28)

इस प्रकार इसकी रचना **'भगवद्गीता'** के आदेष पर ही की गयी है। 143 श्लोकों से रची समस्त **'विदुर–गीता'** उच्च कोटि के अध्यात्म तत्वों से भरपूर है।

10. जाजलि–गीता–

179 श्लोकों वाली इस रचना के आरम्भ में ही युधिष्ठिर ने धर्म के औचित्य के सम्बन्ध में कुछ ऐसे प्रष्न किए गए है जो वर्तमान समय के आलोचकों के कथनों से मिलते जुलते हैं। उसने भीष्म पितामह से कहा कि, 'आपने यद्धपि मेरे हृदय में उठे अनेक प्रष्नों का समाधान कर दिया है पर अब मैं जिज्ञासा के रूप में एक अन्य प्रष्न पूछना चाहता हूँ। यह सत्य है कि धर्म से ही जीवन धारण और उसका उद्वार होता है, परन्तु उस धर्म का ज्ञान केवल वेद–पाठ से कैसे सम्भव है।' सतयुग के धर्म में त्रेता और द्वापर के धर्मों में भिन्नता होती है और कलयुग का धर्म तो नितान्त भिन्न कहा गया है। ऋषियों ने धर्म की व्यवस्था मनुष्यों की शक्ति के अनुकूल ही की है। पर वेदों का कथन एकांगी सत्य की तरह है। 'धर्म' की इस आधुनिक ढंग की आलोचना के समाधान में भीष्मजी ने जाजलि तपस्वी और तुलाधार वैष्य का जो संवाद सुनाया, उसमें स्वीकार किया गया है कि स्वार्थी धर्म याजकों ने सच्चे निष्काम यज्ञ के स्वरूप को विकृत कर डाला है। सच्चा यज्ञ हार्दिक श्रद्धा और अहिंसा पर ही आधारित है और उसे करने में ही धर्म की प्राप्ति हो सकती है।

11. श्री महेष्वर–गीता–

आरम्भ में पार्वती और षिव के प्रष्नोत्तर के रूप में यह बतलाया है कि महादेव की अषुभ वेषभूषा, विचित्र वाहन वृषभ, अपवित्र निवास स्थान श्मषान, भूतपिषाचों की सेना को साथ रखना, भॉग–धतूरा जैसे विषाक्त पदार्थों के प्रयोग आदि का क्या कारण है? फिर पार्वतीजी ने लोक कल्याणार्थ धर्म का स्वरूप कथन करने की प्रार्थना की तो भगवान षिव ने धर्म का पहला लक्षण **'अहिंसा'** ही बतलाया।

अधिकांष विद्वान वैष्णव धर्म और जैन धर्मों को ही अहिंसा और जीव, दया का विषेष रूप से अनुयायी मानते हैं और शैव तान्त्रिकों में जो षिव के उपासक कहलाते हैं, मॉस–मद्य आदि का बन्धन कम देखने में आता है। पर **'महेष्वर–गीता'** के लेखक ने सर्वत्र 390 श्लोकों में अहिंसा का ही प्रतिपादन किया है जिसे इसकी एक मुख्य विषेषता समझनी चाहिए। शूद्रों के सम्बन्ध में भी इसमें बहुत अधिक उदार विचार प्रकट किए गए हैं जो स्मृतियों आदि में मिलने वाले नियमों और कट्टरतायुक्त विधि विधानों से कहीं अधिक उच्च कोटि के हैं, 'जो शूद्र, सत्यभाषी, जितेन्द्रिय और आतिथ्य–परायण हैं वह महान तप का भागी होता है।' इसके साथ ही इसमें अधिकांष धर्म–षास्त्रों में वर्णित चारों वर्ण–आश्रमों के धर्मों का ही वर्णन किया गया है।[5]

12. मंड्कि–गीता–

यह एक बहुत छोटी रचना है। इसमें केवल 33 श्लोक हैं परन्तु इसमें एक उपाख्यान के रूप में कामना और तृष्णा के बंधन में पड़ जाने वाले मनुष्य का जो चित्रण किया गया है वह वास्तव में षिक्षाप्रद और सांसारिक पदार्थों की लिप्सा का स्पष्टतः निराकरण करने वाला है। मंड़िक ऋषि का यह कथन यथार्थ ही है कि, 'धन की कामना सुख दे वाली नहीं है। धन मिल जाने पर उसकी रक्षा आदि की चिन्ता रहती है। यदि वह एक बार प्राप्त होकर फिर नष्ट हो जायं तब भी भयंकर दुःख की प्राप्ति होती है। इसलिए संसार में जीवन निर्वाह के लिए निष्काम भाव रखना ही सर्वोत्तम है।'

13. याज्ञवल्क्य–गीता–

महर्षि याज्ञवल्क्य राजा जनक के आध्यात्मिक गुरू थे। उनकी रचित 'याज्ञवल्क्य स्मृति' अभी तक अनेक विषयों में प्रमाणभूत मानी जाती है। 290 श्लोकों में बद्ध इस गीता में राजा जनक के प्रष्न करने पर महर्षि ने सृष्टि और प्रलय का जो वर्णन किया है, वह अन्य पौराणिक वर्णनों की अपेक्षा बहुत स्पष्ट और बुद्धिगम्य है। आगे चलकर योग साधन की विधि बतायी गयी है जिससे मनुष्य समाधि अवस्था को प्राप्त होकर परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त कर लेता है, जिससे योगी दीर्घकाल के पष्चात् अपने जड़ शरीर को

 ISSN: 2229 - 6646

छोड़कर केवल परब्रह्म परमात्मा को ही प्राप्त कर लेता है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने योग के सम्बन्ध में और भी महत्वपूर्ण और ज्ञातव्य तथ्य दिए हैं। सूर्य से वरदान प्राप्त करके उन्होंने किस प्रकार शुक्ल यजुर्वेद और अन्य महान ग्रन्थों की रचना की, यह भी सविस्तार बतलाया गया है।

14. वषिष्ठ–गीता–

इसमें 251 श्लोक थे। इसमें क्षर–अक्षर का प्रष्न उठाकर सांख्य के 24 क्षर–तत्वों का निरूपण किया गया है। 25वॉं तत्व जो निराकार परब्रह्म है, उसी को केवल अक्षर माना है। फिर इन चौबीस क्षर–तत्वों के संयोग से उस अक्षर तत्व में भी क्षर के से लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। इस बन्धन में बॅंधकर अज्ञानी जीवन कैसी–कैसी क्रियायें करता है– इसका वर्णन बहुत प्रभावषाली है। जिन कर्मों को आजकल 'धर्मात्मा' कहलाने वालों ने सर्वाधिक पुण्यप्रद समझ रखा है, जैसे एक निष्चित प्रकार के ही वस्त्र धारण करना, कई प्रकार के उपवास रखना, सिद्धि पाने के लिए कठोर नियमों का पालन करना आदि, इन सबको वषिष्ठ गीताकर ने अज्ञान का खेल कहा है। उसके अनुसार मोक्ष इन बाह्य कर्मों से प्राप्त नहीं हो सकता। ज्ञान के साथ–साथ साधारण धर्माचारण करना ही मार्ग है।

15. मार्कण्डेय–गीता–

इसके आरम्भ में ऐसे महापुरूषों का वर्णन किया गया है जो पूर्ण सदाचार, सत्य और न्याय का जीवन व्यतीत करते हैं, जिसके फलस्वरूप वे मृत्यु से कभी भयभीत नहीं होते। 348 श्लोकों वाली इस रचना में मुनिवर अरिष्टनेमि सदाचार और कर्मण्यता को बहुत महत्व देते हैं कि जहॉं इन दोनों शक्तियों का समन्वय हो जायं वहॉं अन्य किसी बात की कमी नहीं हो सकती। तत्पष्चात् राजा पृभु के यज्ञ और उसमें गौतम तथा अत्रि की कलह तथा वाग्युद्ध की कथा है। यह वर्णन चाहे सत्य हो या काल्पनिक, पर उससे यह अवष्य प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में भी जब धार्मिक जन त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करते थे तब भी वंषगत की श्रेष्ठता के अहंकार और अपनों के प्रति पक्षपात का दोष लोगों में पर्याप्त पाया जाता था।

16. भृगु–गीता–

इसमें 258 श्लोकों में विष्व के स्वरूप का जैसा वर्णन किया गया है, वह आधुनिक वैज्ञानिक खोजों से बहुत मिलता जुलता है। जहॉं अन्य पुराणों में तारागणों को सूर्य–चन्द्र की अपेक्षा बहुत नगण्य और समीप बताया है, भृगुजी ने स्पष्टतः कहा है कि, 'इस आकाष का कहीं अन्त नहीं है और सूर्य चन्द्रमा में से ऊपर नीचे जाने पर सूर्य और अग्नि के समान तेज वाले **'देवता'** अपने प्रकाष से स्वयं प्रकाषित होते हैं। परन्तु उन तेजस्वी नक्षत्र रूपधारी देवताओं को भी आकाष का अन्त कहीं दिखाई नहीं देता क्योंकि यह अनन्त और दुगर्म है। अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी का उद्‌गम आकाष ही है और उससे भिन्न कुछ नहीं है।' इस अनन्त विष्व के स्वरूप का यही अनुमान अत्यधिक आधुनिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा वैज्ञानिकों ने लगाया है।

आत्मा, जीव, परलोक के सम्बन्ध में भी इसमें पूर्णरूप से तर्कयुक्त प्रष्न किए गए हैं। भृगुजी के चारों वर्णों और आश्रमों के धर्म बहुत स्पष्ट और बुद्धिसंगत रूप में बतलाये गये हैं पर उनमें जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होता है वह यह है कि उन्होंने वर्ण का निर्णय कर्मानुसार किया गया है।

17. कपिल–गीता–

इसमें 155 श्लोक हैं। सांख्य दर्षन के रचयिता महर्षि कपिल को कुछ लोग अनीष्वरवादी कहते हैं क्योंकि उन्होंने अपने दर्षन में ईष्वर के सम्बन्ध में कुछ न लिखकर प्रकृति में से ही सब तत्वों के निकलने और उनसे इस प्राणिमय जगत के निर्मित होने का वर्णन किया है। साथ ही उन्होंने वेदों का उल्लेख भी बहुत कम किया है। जिससे सामान्यतः पाठक उन्हें वेद–विरोधी तो नहीं पर वेदों के प्रति उदासीन कहते हैं। इस गीता के प्रारम्भ में **'स्थूम रष्मि'** नामक ऋषि के मुख से कपिल को सम्बोधित करके यह बतलाया गया है कि, 'यदि वेदों के प्रामाणिक होने में आपको संदेह है तो अन्य धर्मषास्त्रों को भी किस आधार पर

प्रामाणिक कहा जा सकता है।'[6] जिसके उत्तर में कपिल कहते हैं– 'मैं वेद निंदक और उनके विरूद्ध नहीं हूॅ।'[7] परन्तु वेदों के आधार पर होने वाली पषु हत्या का समर्थन करने वालों से उनकी सम्मति नहीं है। स्वर्ग–प्रदायक कर्मकाण्ड का विरोध न करते हुए भी ज्ञानमार्ग पर चलकर परब्रह्म की प्राप्ति का मार्ग श्रेष्ठ मानते हैं। निष्काम कर्मयोगी की प्रषंसा करते हुए वे कहते हैं कि वे शीतोष्णादि द्वन्द्वों में विचलित नहीं होते। किसी कामना के बन्धम में न बॅधते हुए वे सब पापों से मुक्त, पवित्र, निर्मल जीवन व्यतीत करते हैं। सकाम कर्म स्वर्ग–प्रदायक तो हो सकता है, पर फिर भी भव–बंधन में बॉधने वाला है।

18. ब्रह्म–गीता–

140 श्लोकों द्वारा इसमें समाज व्यवस्था और राज्य व्यवस्था का विवेचन किया गया है। इसके अनुसार–मानव सृष्टि के आदिकाल में कोई राज्य और राजा नहीं था। सम्पूर्ण प्रजा धर्मानुसार आचरण करके परस्पर रक्षा करती थी। परन्तु कुछ समय बाद इस व्यवस्था में षिथिलता आ गयी, विकृतियॉ पैदा होने लगीं, समाज में भॉति–भॉति के अपराध होने लगे तो सज्जनों की रक्षा और दुष्टों का नियन्त्रण करने वाली किसी सत्ता की आवष्यकता प्रतीत हुई। तब मनीषीजनों ने राजनीतिषास्त्र की रचना की और राजा की स्थापना की। इसका उपदेष करते हुए ब्रह्मा जी तथा अन्य ऋषियों ने कहा था कि दण्ड विधान को साथ लेकर चलने वाली यह नीति सम्पूर्ण विष्व की रक्षा करने में समर्थ होगी। राजा अथवा अन्य प्रकार के शासक को न्याय–पालन और जनहित साधन को सर्वप्रथम कर्तव्य समझना चाहिए।

19. बृहस्पति–गीता–

इसमें 178 श्लोक हैं। यद्यपि हिन्दू धर्म में पुनर्जन्म का सिद्धान्त प्रायः सर्वमान्य है पर मृत्यु के पष्चात् का जीवन कैसा होता है, इसके सम्बन्ध में बहुत मतभेद पाया जाता है। ज्ञानीजन स्वर्ग–नरक सब इसी धरती पर मानते हैं, जबकि सामान्य जन आकाष के किसी दूरवर्ती कोने में स्थित स्वर्ग–नरक के अस्तित्व में विष्वास रखते हैं। विभिन्न पुराणों में भी भॉति–भॉति के नरक का वर्णन अत्यधिक लोमहर्षक ढंग से किया गया है। बृहस्पति गीता में भी आगामी जन्म में कर्म फल का विषय ही वर्णित है पर उस की शैली अनूठी है। उसके मतानुसार पापी व्यक्ति न केवल नरक में तरह–तरह के कष्ट सहन करता है अपितु नरक से निकरलेन पर भी संसार में आकर कूकर–षूकर आदि की निकृष्ट योनियों में दुर्दषा को प्राप्त होता है। कृतघ्न व्यक्ति को कुम्भीपाक, असिपत्रवन आदि नरकों में रहकर संसार में 15 वर्षों तक कृमियोनि भोगनी पड़ती है। कर्मफल का भोगना एक अनिवार्य तथ्य है– वह चाहे इस संसार में रहकर भोगना पड़े चाहे अन्य लोक में।

20. उतथ्य–गीता–

समाज में राजा अथवा शासनकर्ता की आवष्यकता किसलिए है और उसका क्या कर्तव्य है, यह इस गीता में 101 श्लोकों द्वारा बहुत अच्छी तरह बताया गया है। यह सत्य है कि राजमद में अधिकांष व्यक्ति मदांध हो जाते हैं और प्रायः अनुचित कर्म करने लगते हैं। पर यदि राजा न्यायषील और अपने कर्तव्य का दृढ़तापूर्वक पालन करने वाला हो तो इससे प्रजा का अत्यधिक कल्याण हो सकता है। इसी सिद्धान्त को समझाते हुए उतथ्य कहते हैं कि धर्माचरण करने वाला राजा देवता हो जाता है पर अधर्मरत राजा को नरकगामी होना पड़ता है। सभी प्राणी धर्म के आधार पर स्थित हैं, पर राजा धर्म के ऊपर स्थित होता है। अतः ठीक प्रकार से धर्म पालन करते हुए वह दीर्घकाल तक पृथ्वी का अधीष्वर बना रहता है। यदि वह पाप कार्यों को नहीं रोकता तो धर्म व्यवस्था का कुछ भी आधार नहीं रहता और पाप की शक्ति बढ़ जाती है। वर्तमान युग में व्यक्तिगत राजा के स्थान पर अनेक व्यक्ति शासन संचालक बनाए जाते हैं। उनके दूषित आचरणों से सामान्य लोगों की जो दुर्दषा हो रही है उसे देखते हुए उक्त कथन सर्वथा सत्य प्रतीत होता है।

21. पंचषिख–गीता–

इसमें 114 श्लोकों द्वारा आत्मा के अस्तित्व पर बौद्धिक रूप से विचार किया गया है और नास्तिकों के इस मत कि शरीर के नष्ट होने के साथ आत्मा का भी अन्त हो जाता है का तर्क पूर्वक निराकरण किया गया है। इसी तथ्य को सिद्ध करते हुए महर्षि पंचषिख का कथन है कि, 'यदि शरीर के मरने के साथ

आत्मा का मरना भी मान लें तो उसके द्वारा किए गए कर्मों का अन्त हो जाना भी मानना पड़ेगा। तब शुभ और अशुभ कर्मों को भोगने वाला भी कोई नहीं रहेगा। पर संसार में मनुष्यों को जो सुख दुःख रूप भोग प्राप्त होते हैं तो स्पष्ट जान पड़ता है कि उनका सम्बन्ध इस जन्म के कर्मों से न होकर पूर्व जन्म के कमों से भी होता है। इससे आत्मा का अस्तित्व और उसकी अमरता सिद्ध होती है। जो लोग देह के साथ ही आत्मा का अन्त मान लेते हैं उनमें से अधिकांष दूसरों का अहित करने वाले पाप कर्मो में संलग्न होते हैं। इस प्रकार की धारणा से समाज का अस्तित्व भी नहीं रह सकता है।अतः यह स्वार्थ परायणता की मान्यता है। इसी कारण सभी सन्त पुरूषों ने और विद्वानों ने आत्मा का अस्तित्व स्वीकार किया है।

22. सावित्री–गीता–

सावित्री–सत्यवान की कथा भारतीय समाज में सुप्रसिद्ध है। सावित्री ने पतिव्रत का जो अनुपम उदाहरण उपस्थित किया और उसी शक्ति द्वारा अपने पति को यमराज के फन्दे से छुड़ा लिया, वह विष्वसाहित्य का एक अमर उपाख्यान है। 127 श्लोकों में सावित्री के कथन का मुख्य आषय यही था कि सन्त समागम का परिणाम सदा कल्याणकारी होता है। यद्यपि इसमें किसी धार्मिक प्रष्न का समाधान नहीं पाया जाता, पर सावित्री ने अपनी धर्म और नीतियुक्त बातों से यमराज को सन्तुष्ट करके जिस प्रकार अपने पति का उद्वार किया वह वार्तालाप भी कम महत्वपूर्ण नहीं है।

23. ईष्वर–गीता–

इसमें विस्तार के साथ जीवात्मा और परमात्मा (परम+आत्मा) के विषय में विवेचन किया गया है। इसमें 495 श्लोक हैं। जिस प्रकार **'भगतद्गीता'** में भगवान कृष्ण ने ईष्वरीय भाव से अर्जुन को आत्मोपदेष दिया है और निष्काम मार्ग से चलकर मुक्त होने की विधि बताई है, उसी प्रकार **'ईष्वर–गीता'** में सनक सनन्दन के प्रष्न करने पर भगवान षिव ने ज्ञान के सच्चे स्वरूप का दिग्दर्षन कराया है। विद्वानों के मतानुसार ब्रह्मा–महेष में कोई अन्तर नहीं, तीनों ही एक परमात्मा के तीन रूप हैं। जिस प्रकार श्रीकृष्ण ने अर्जुन को विराट रूप दिखाकर विष्व का वास्तविक स्वरूप समझाया था, उसी प्रकार **'ईष्वर–गीता'** में भी षिवजी द्वारा नृत्य करते हुए विष्व–रूप दिखाने का वर्णन मिलता है।

ईष्वर–गीता की रचना बहुत कुछ 'भगवद्गीता' के आदर्ष पर ही हुई है। इसलिए इन दोनों के बहुत श्लोकों के शब्द और भाव एक दूसरे से मिलते हैं। जैसे–

1. **पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।**
   तदहं भक्त्युपहृतमष्नामि प्रयतात्मनः।।
   यत्रं पुष्पं फलं तोयं मदाराधन कारणात्।
   यो मे ददाति नित्यं स मे भक्तः प्रियो मम।।

2. **मन्मनाभव मद्भक्तो मद्याजी मां नमरूकरू।**
   मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।।
   कुर्वते मत्प्रसादार्थं कर्म संसार नाषनम्।
   मन्मना मन्नमस्कारो मद्याजी मत्परायणः।।

'ईष्वर–गीता' की सबसे बड़ी विषेषता यही है कि उसने **'षैव सिद्धान्त'** का प्रतिपादन करते हुए वैष्णव आदि अन्य किसी सम्प्रदाय से द्वेष अथवा हीनता का भाव व्यक्त नहीं किया अपितु यही कहा है कि, 'जो व्यक्ति अन्य देवताओं के भक्त है और उनकी पूजा करते हैं परन्तु साथ ही मेरे प्रति श्रद्धा भावना रखते हैं वे भी मुक्त हो जाते हैं।' यह समन्वय भावना ही सच्चे धर्म का मूल है।

24. व्यास–गीता–

इसमें ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी आदि चारों आश्रमों के व्यक्तियों के धर्म–कर्तव्य और आचार–विचार का वर्णन किया गया है। इसमें 605 श्लोक हैं। इसमें ब्रह्मचारी के लिए जो विधि–विधान

 ISSN: 2229 - 6646

बताया गया है उसका उद्देष्य यह है कि उसे आरम्भ से ही ऐसा सीधा–सादा और कठोर जीवन व्यतीत करना चाहिए, जिससे आगामी समय में सब प्रकार के संघर्षों में धैर्यपूर्वक टिका रहे और समस्त अवरोधों को पार करके विजय प्राप्त कर सके। गृहस्थ के लिए सुखोपभोग की अपेक्षा समाज सेवा और समाजोन्नति को प्राथमिकता देनी चाहिए। यदि समाज सुखी और समुन्नत होगा तो उसके सदस्य भी उन्नतिषील जीवन व्यतीत कर सकेंगे। इसमें सबसे अधिक उत्तरदायित्व ब्राह्मणों का बताया गया है। उन्हें समाज को नेता व मार्गदर्षक माना गया है। ब्राह्मण के लिए ही नहीं, मानव–मात्र के लिए यही एक स्वर्ण संदेष है। जिस दिन मनुष्य अपने लिए कम और दूसरे के लिए अधिक से आदर्ष का पालन करने लग जायेगा, उसी दिन पृथ्वी पर स्वर्ग उतर जायेगा।

25. <u>ब्रह्म–गीता</u>–

स्कन्द पुराणान्तर्गत सूतसंहिता में वर्णित **'ब्रह्म–गीता'** में 12 अध्याय हैं। इसकी विषेषता यह है कि इसमें षिवतत्व का वैदिक पृष्ठभूमि में विवेचन किया गया है। इसमें षिव को ही परमतत्व बताया गया है और वेदमन्त्रों के द्वारा उस षिवतत्व के स्वरूप का प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार ब्रह्म–गीता जहॉ षिवतत्व का विवेचन करने के कारण शैवागम और शैवदर्षन से सम्बद्ध है, वहॉ वेद–मन्त्रों द्वारा षिव स्वरूप विवेचन के कारण वैदिक परम्परा से भी सम्बद्ध है। इसमें षिवोपासना की वेदमूलकता प्रतिपादित की गयी है। इसमें कैवल्योपनिषद बृहदारण्य कोपनिषद, कठोपनिषद, तलवकार उपनिषद से विषेष सामग्री ली गयी है और उन औपनिषदिक मन्त्रों की षिव–स्वरूप बोधक व्याख्या विषेष रूप से प्रस्तुत की गयी है।

26. <u>अवधूत–गीता</u>–

महर्षि दत्तात्रेय कृत **'अवधूत–गीता'**में आठ अध्याय है। जिनमें क्रमषः आत्मा–ब्रह्म की एकता, **'अहम् ब्रह्मास्मि'** के द्वारा षिष्य को आत्म–ज्ञान का उपदेष, ब्रह्म स्वरूप का वर्णन, आत्मबोध में गुरू की भूमिका, षिष्य को आत्म–स्वरूप कथन, त्याग भावना का त्याग वर्णित है। अवधूत–गीता के अनुसार आत्मा का कथन सम्भव नहीं, आत्मा एक ही है और षिवरूप है। अन्त में जीवनमुक्ति की स्थिति और अवधूत मुनि के लक्षण दिए गए हैं। संसार के सभी दृष्य पदार्थ जड़ प्रकृति द्वारा निर्मित हैं– जिनका निर्माण उस चेतन तत्व से हुआ है तथा वही चेतन तत्व सबके भीतर स्थित ही उसका नियन्त्रण और नियमन कर रहा है।मनुष्य के भीतर का वह चेतन तत्व, जिसे आत्मा के नाम से सम्बोधित किया जाता है, वह उसी परम चेतन ब्रह्म अथवा समष्टि चेतन का ही अंष है। इसी ज्ञान प्राप्ति के बाद उसे सृष्टि में एकतत्व दिखाई देता है जो पूर्ण ज्ञान है।

27. <u>उत्तर–गीता</u>–

भगवद्गीता में पातंजल योग, हठयोग और कर्मत्यागरूप सन्यास का यथोचित वर्णन देखकर उसकी पूर्ति के लिए कृष्णार्जुन संवाद के रूप में **'उत्तर–गीता'** लिखी गयी।

28. <u>अनु–गीता</u>–

अष्वमेघ यज्ञ समाप्त होने के बाद अर्जुन श्रीकृष्ण से बोले कि युद्ध के प्रारम्भ में उन्होंने जो उपदेष दिया था वह विस्मृत हो गया। तत्पष्चात् अर्जुन ने उन्हें पुनः तत्वज्ञान का उपदेष देने का अनुरोध किया। यह कथा–सन्दर्भ अष्वमेधपर्व के 17वें अध्याय में आया है और स्वर्गलोक से आये हुए एक ब्राह्मण ने जो तत्वज्ञान बताया, वह इस स्थान पर मिलता है। अनुगीता का विस्तार साधारणतः इस 17वें अध्याय से 51वें अध्याय के अंक तक है जहॉ वसुदेव की भेंट करने के लिए श्रीकृष्ण ने द्वारिका को पुनः लौटने की बात कही है। इसके 51 अध्यायों को तीन प्रकरणों में बॉटा गया है। प्रथम प्रकरण में उपर्युक्त ब्राह्मण का कहा हुआ तत्वज्ञान है। द्वितीय प्रकरण में ब्राह्मण–ब्राह्मणी संवाद है। तृतीय प्रकरण में गुरू–षिष्य संवाद है।

29. <u>गॉधी साहित्य गीता माता</u>–

राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी द्वारा यह गीता को श्रद्धांजलि है। जिसे उन्होंने यरवदा जेल में 11 नवम्बर 1930 को लिखा। गॉधीजी ने इसकी भूमिका में कहा है कि, 'मैं तो अपनी सारी कठिनाईयों में गीता माता के पास दौड़ता हूँ और अब तक आष्वासन पाता आया हूँ। वह गीता हमारी सद्गुरू है, माता रूप है और हमें विष्वास रखना चाहिए कि उसकी गोद में सिर रखकर हम सही सलामत पार हो जायेंगे।' इसमें 6 अध्याय हैं। पहले अध्याय में भूमिका और प्रस्तावना के साथ–साथ गीता के महत्व का वर्णन है। दूसरा अध्याय '**अनासक्तियोग**' है। तृतीय अध्याय में गीता के मूल श्लोकों के अर्थ और उन पर टिप्पणी है। चतुर्थ अध्याय में 'गीता–प्रवेषिका' है जिसमें भक्ति–प्रधान श्लोकों का संग्रह है। यह संग्रह गॉधी जी ने अपने तीसरे पुत्र रामदास को जेल में भेजने के लिए विषेषतः संकलित किया था। पंचम अध्याय '**गीतापदार्थकोष**' है जिसमें मूल अर्थयुक्त शब्दों को कोष की भॉति नियोजित किया गया है। छठे अध्याय में गीता माता से परिचय, गीता ध्यान, गीता पर आस्था, नित्य व्यवहार में गीता, अनासक्तियोग, गीता जयन्ती, गीता और रामायण की तुलना, '**अहिंसा परमोधर्मः**' आदि विषयों पर विचार किया गया है।

30. श्रीमनमोहन–गीता–

अहिंसा योग अथवा श्रीमनमोहन–गीता गॉधी जी के अहिंसा सम्बन्धी विचारों का विषदीकरण है। इसकी शैली गीता की शैली के ही समान है अर्थात् इसमें भी 18 अध्याय एवं 700 श्लोक हैं। इसमें प्रथम अध्याय में गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर दीनबन्धु से पूछते हैं कि भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में किन–किन वीरों ने भाग लिया और किस सेनानायक ने विषेष रूप से इस महान युद्ध का संचालन किया। दीनबन्धु स्वतन्त्रता संग्राम की संक्षेप में चर्चा करते हैं कि गॉधी जी के सेनापतित्व में अन्य नायकों के अलावा राजगोपालाचार्य, राजेन्द्र प्रसाद, सरोजिनी नायडू, जवाहरलाल नेहरू आदि ने भी भाग लिया। द्वितीय अध्याय में राजेन्द्र प्रसाद गॉधी के समीप चम्पारण रणस्थल में अहिंसा सिद्धान्त की देष की स्वतन्त्रता के लिए और विष्व शान्ति की स्थापना के लिए उपयोगिता पर संदेह करते हैं। उनके इस भ्रम का निवारण करने के लिए गॉधी जी इस गीता का उपदेष आरम्भ करते हैं एवं अहिंसा के दार्षनिक और व्यावहारिक महत्व का प्रतिपादन करते हैं। अहिंसा के साथ तत्सम्बन्धी सत्य, उपवास, ईष्वराराधन, दीनार्तिनाषन आदि सिद्धान्तों का भी स्पष्टीकरण करते हैं। अठारहवें अध्याय में गॉधी जी अपने अहिंसात्मक नवीन समाज अथवा रामराज्य के स्वरूप का चित्र–चित्रण करते हैं।

31. उत्तरसत्याग्रह–गीता–

यह पुस्तक पद्यात्मक शैली में लिखी गयी है। इसके पहले 18 अध्यायों की सत्याग्रह गीता लिखी। उसी को उन्होंने पुनः 47 अध्यायों द्वारा आगे बढ़ाया। जब लॉर्ड इरविन भारत में वॉयसराय बनकर आये तो गॉधी जी से उनके गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने सम्बन्धी, नमक बनाने के आन्दोलन सम्बन्धी तथा अहिंसात्मक सत्याग्रह आन्दोलन सम्बन्धी बातों पर उनसे सन्धि करने लगे। यह गीता महात्मा गॉधी की और जिन्ना की बम्बई में हुई मीटिंग के विवरण के साथ समाप्त हो जाती है।

32. गीता–हृदय–

गीता–हृदय तीन भागों में विभाजित है– पूर्व भाग, मध्य भाग और उत्तर भाग। इन भागों का नामकरण स्वामी सहजानन्द सरस्वती जी ने क्रमषः अन्तरंग गीता एवं बहरंग भाग भी किया है। पूर्व अथवा अन्तरंग भाग में केवल उन्ही के विचारों का संकलन है, जिनसे गीताधर्म और गीता के अर्थ को समझने में सहायता मिलती है। मध्य अथवा गीता भाग में गीता के श्लोकों के सीधे अर्थ लिखे हैं परन्तु आवष्यकतानुसार छोटी–बड़ी टिप्पणियॉ भी दी गयी हैं जो अर्थ ज्ञान में अत्यधिक सहायक हैं। उत्तर भाग में शास्त्रीय विचार के आधार पर गीतार्थ का मार्क्सवादी आदि अन्य दार्षनिक विचारों के साथ तुलनात्मक विवेचन किया गया है।

33. पंच–गीता–

श्रीभारतधर्ममण्डल के शास्त्र प्रकाष विभाग के द्वारा इस ग्रन्थ रत्नाकर की रचना की गयी है। इसमें विष्णु सम्प्रदाय के लिए श्रीविष्णु–गीता, सूर्य सम्प्रदाय की श्रीसूर्य–गीता, देवी सम्प्रदाय की श्रीषक्ति–गीता, गणपति सम्प्रदाय की श्रीधीष–गीता और षिव सम्प्रदाय की श्रीषंभु–गीता ये पॉचों ही अति अपूर्व उपनिषदरूपी हैं। यद्यपि '**देवी–गीता**', '**षक्ति–गीता**', '**षिव–गीता**', '**गणेष–गीता**' नाम से कुछ अन्य ग्रन्थ

असम्पूर्ण दषा में प्रकाषित हुए हैं। यह पंचगीता वेद–विज्ञान, सनातन धर्म के अपूर्व रहस्य, गम्भीर अध्यात्म तत्व और महर्षियों के ज्ञानगरिमा के सिद्धान्त से परिपूर्ण हैं। निगुर्ण ब्रह्म तथा उसकी उपासना का रहस्य, सगुण की उपासना का महत्व और विज्ञान, वेदों के कर्मकाण्ड, उपासना का रहस्य, सगुण की उपासना का महत्व और विज्ञान, वेदों के कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड तथा ज्ञानकाण्ड का महत्व, सनातन धर्म के समस्त गम्भीर सिद्धान्तों का निर्णय, अध्यात्म तत्व, अधिदैव तत्व, अधिभूत तत्व और यहाँ तक कि वेदों का सार इन पंचगीताओं में पाप्त होता है।

34. श्री शक्ति–गीता–

देवी सम्प्रदाय का **'गीता'** नाम से उपलब्ध यह स्वतन्त्र ग्रन्थ विद्यमान है। पुराकाल में महादेवी देवताओं के सम्मुख प्रकट हुई थी और उन्होंने व्यक्तिमान ब्रह्म के शक्तिमय स्वरूप के अनेक रहस्य भली भॉति सुनाकर उन्हें कृत किया गया था। व्यास जी उपनिषदों की साररूपा, वेदों का निष्कर्ष और ज्ञानज्योति की जननी स्वरूप सुदिव्य शक्ति गीता को सूतजी को उनकी भक्ति और जगत् कल्याण में लगी हुई बुद्धि से प्रसन्न होकर सुनाते हैं। इस ग्रन्थ को सात अध्यायों में विभाजित किया गया है। जिनमें महामाया का स्वरूप दर्षन, शक्ति और शक्तिमान में अभेद, चितकला–विज्ञानयोग वर्णन, वेदकाण्डत्रययोगविज्ञान वर्णन, मन्त्र शक्ति विज्ञान–योग वर्णन, कर्म–विज्ञानयोग वर्णन, ज्ञान–विज्ञानयोग वर्णन, विराट्रूप दर्षन, विभूतियोगदर्षन आदि के बारे में देवी द्वारा जिज्ञासा शान्ति की गयी है।

35. रामगीता–

70 श्लोकों वाला यह भी एक स्वतन्त्र लघु ग्रन्थ है। आकार में लघु होने पर भी इसमें अत्यधिक सुनियोजित ढंग से गूढ़ आध्यात्मिक तथ्यों पर विचार किया गया है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में इसका माहात्म्य वर्णन करते हुए कहा गया है कि जमदग्नि के पुत्र परषुराम जी कार्तवीर्य के वध की इच्छा से धनुर्विधा का अभ्यास करने के लिए शंकरजी के पास रहते थे। वहाँ पार्वती जी नित्य रामगीता का पाठ करती थी। उस पाठ को सुनने पर तत्क्षण ही परषुराम नारयाणरूपा हो गये।

रावणादि के वध द्वारा अपने यष का विस्तार करके एकदा श्री रामचन्द्र जी को लक्ष्मण ने अतिविनयपूर्वक निवेदन किया है कि वे ऐसी षिक्षा दें जिससे वे इस अविधारूपी समुद्र को बिना खेद से पार कर जायं। तत्पष्चात् अज्ञानरूप अन्धकार को नष्ट करने के लिए रामचन्द्र जी ने श्रुतियुक्त ब्रह्मज्ञान का उपदेष दिया। जिसमें उन्होंने आत्मसत्ता का वर्णन, ज्ञान के लक्षण, अज्ञान का स्वभाव, कर्म की आवष्यकता, कर्म और ज्ञान के समन्वय, ब्रह्म–जीव एकता, गुण–प्रकृति तथा सृष्टि का सम्बन्ध, जीवनमुक्त के लक्षण आदि गहन विषयों पर प्रकाष डाला है।

सन्दर्भ सूची

1. अष्टावक्र गीता टीकाकार–राय बहादुर बाबू जालिम सिंह, प्रकाषक–तेजकुमारबुकडिपो (प्रा0) लि0 लखनऊ, बारहवॉ संस्करण–सन् 2000 ई0
2. अष्टावक्र गीता व्याख्याकार–नन्द लाल दषोरा, प्रकाषक–रणवीर प्रकाषन, हरिद्वार। बारहवॉसंस्करण–सन् 2002 इ ́0
3. अष्टावक्र गीता अनुवादक–स्वामी हरिहरदास त्यागी, प्रकाषक–रणवीर प्रकाषन, हरिद्वार। प्रथमसंस्करण–सन् 2001 ई0
4. अष्टावक्रमहा गीता व्याख्याकार–काका हरिओउम्, प्रकाषक–मनोज प्रकाषन, दिल्ली। संस्करण–सन् 2004 ई0
5. अष्टावक्रमहा गीता व्याख्याकार–ओषो, प्रकाषक–ताओ प्रकाषन प्रा0 लि0 पुणे।
6. अष्टावक्रमहा गीता व्याख्याकार–आचार्य मानिक, प्रकाषक–साधना प्रकाषन, दिल्ली। संस्करण–सन् 2004 ई0

स्मृतिसाहित्य–

1. श्रीमद्भगवद् गीता प्रकाषक–गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. श्रीमद्भगवद् गीता टीकाकार–जयदयाल गोयन्दका।
3. तत्वविवेचनी हिन्दी– टीकाप्रकाषक–गीता प्रेस, गोरखपुर, उन्नीसवॉस ंस्करण– सं0 2049।
4. षिवगीता टीकाकार– पं0 ज्वाला प्रसाद मिश्र, प्रकाषक– खेमराज श्रीकृष्ण दास, बम्बई संस्करण–सन् 2002 ई0 पप

अद्वैत दर्षन साहित्य–

1. अप्पय दीक्षित सिद्धान्तलेष संग्रह अनुवादक–वेदान्ताचार्य प ं0 श्रीमूलष ंकरव्यास, प्रकाषक–भारतीय बुककारपोरेषन, दिल्ली संस्करण–सन् 2005 ई0

2. चित्सुखाचार्य तत्वप्रदीपिका (चित्सुखी) प्रकाषक–उदासीन संस्कृत विद्यालय, वाराणसी तृतीय संस्करण–सन् 1985 ई0

3. दत्तात्रेय अवधूत गीता अनुवादक और व्याख्याकार–नन्दलालदषोरा, प्रकाषक–रणवीर प्रकाषन, हरिद्वार। बारहवॉ ंसंस्करण–सन् 2002 इ ं0

4. दत्तात्रेय जीवनमुक्त गीता टीकाकार–ब्रजरत्न भट्टाचार्य, प्रकाषक–खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई। संस्करण–सन् 1999 ई0

5. नृसिहाश्रम वेदान्त तत्व विवेक अनुवादक–स्वयं प्रकाषगिरि, प्रकाषक – श्री दक्षिणा मूर्ति मठ प्रकाषन, वाराणसी प्रथम संस्करण–सन् 1997 ई0

6. पद्मपादाचार्य पंच पादिका टीकाकार एवं सम्पादक – डा0 किषोर दास स्वाामी, प्रकाषक – स्वामी रामतीर्थ मिषन, देहरादून। संस्करण–सन् 2001 ई0

7. विद्यारण्य स्वामी जीवन मुक्ति विवेक टीकाकार–ठाकुर उदयनारायण सिंह, प्रकाषक–चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी द्वितीय संस्करण– सनं0 2041

सामान्य ग्रन्थ–

1. आधुनिक भारतीय चिन्तन विष्वनाथ, नरवणे अनु0 नेमि चन्द्र जैन, राजकमल प्रकाषन, दिल्ली–1966।
2. गीता दपर्ण स्वामी रामसुख दास गीता प्रेस, गोरखपुर, 1991।
3. गीतातत्वांक स्वामी रामसुख दास गीता प्रेस, गोरखपुर, 1948।
4. गीता उपदेष जगदीष चन्द्र विद्यार्थी आर्य कुमार सभा, दिल्ली, 1995।
5. गीता का कर्म योग विष्वबन्धु वी0वी0आर0आई0 होषियारपुर, 1970।
6. गीता का योग रामसुख दास गीता प्रेस, गोरखपुर, 1985।
7. गीता का प्रेरक तत्व काका साहबे कालेत्रकर भारतीय विद्याभवन, बम्बई, 1967।
8. गीता धर्म गीता धर्मकार्यालय, काषी, 1938।
9. गीता का व्यवहार राम गोपाल मेहता किताब महल, इलाहाबाद।
10. चौबीस गीता पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य संस्कृत संस्थान, ख्वाजा, कुतुबरोड़, बरेली, 1971।
11. भारतीय दर्षन डा0 राधा कृष्णन नन्दकिषोर राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1966।
12. भारतीय दार्षनिक समस्यायें नन्दकिषोर शर्मा राजस्थान साहित्य संस्थान, जयपुर।
13. वेदान्त दर्षनवादरायण व्याख्या गोविन्दानन्द, वेंकटेष्वर मुद्रणालय, बम्बई, 1994।

14. वेदान्त दर्ष्न डायसनपाल हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, 1971।
15. श्रीमद्भगवद् गीता घनष्याम दास जालन गोविन्द भवन कार्यालय, गीताप्रेस, इलाहाबाद।
16. श्रीमद्गणेष गीता नीलकन्ठ आनन्द आश्रम, पूना।
17. श्रीमद्भगवद् दर्षन वाई0बी0कल्हकर पूना विद्यापीठ, पूना।
18. योग दर्षन डा0 सम्पूर्णानन्द हिन्दी समिति, सूचना विभाग, लखनऊ।